M.A. II Sem IV

History EC (3C)

जमींदार वर्ग, कृषक वर्ग एवं बंधुआ मजदूर

17वीं शताब्दी के ग्रामीण इलाकों में विभिन्न वर्गों के लोग पिरामिडनुमा जीवन व्यतीत करते थे। पिरामिड के सबसे नीचे तल्ले में भूमिहीन बंधुआ मजदूर थे। इनके ऊपर छोटे किसान, अत्यन्त छोटे किसान और बटाई पर काम करने वाले किसान थे। पिरामिड की चोटी पर रहने वाले लगानभोगी वर्ग थे, जो जमींदारों की तरह अनेक जमीन के स्वामित्व के एवज में लगान पाते थे।

बंधुआ मजदूर की अवस्था सबसे करुण थी। वस्तुतः बंधुआ मजदूर का अर्थ है पैसे उधार लेकर उसे चुका न पाने के फलस्वरूप श्रम के द्वारा उसे चुकाने की कोशिश करना अथवा स्वयं को बंधक रखना। यह एक प्रकार से अपनी दासता की दस्तावेज पर हस्ताक्षर करना था। इन्हें बंगाल में खतबंदी श्रमिक, बिहार और उत्तर प्रदेश के पूर्वांचल में कमिया, तमिलनाडु में पन्नयाल गुजरात में डुब्ला और हाली, हैदराबाद में भगेला, कहे जाते थे। ये आर्थिक शोषण और सामाजिक प्रतिबंधों की स्थिति में रह रहे थे। ये बड़े-बड़े जमींदारों के घरों स्थाई नौकरों की तरह पीढ़ी दर पीढ़ी रहते आ रहे थे। वे इस्तीफा देकर दूसरी जगह काम पर नहीं

बंधुआ मजदूर

जो व्यक्ति भी एक बंधुआ मजदूर का उत्तराधिकारी खुद भी बंधुआ बना लेता था। ऋणदाता प्रायः मालिक की तरह इन बंधुआ मजदूरों को दूसरे मालिक को सौंप सकता था। उनकी यह स्थिति ग्रामीण समाज में तथाकथित ऊँची जातियों के तरह-तरह के जोर के कारण थी। ज्यादातर बंधुआ मजदूर जन उपजातियों से संबद्ध थे जो हिंदू किसानों अथवा उच्च वर्ग के हिंदुओं के हाथ अपनी जमीन हार गए थे। सामाजिक और आर्थिक दुर्व्यवस्था दुर्व्यवस्था के शिकार इन बंधुआ मजदूरों की मुक्ति के अनेक बार घोषणाएं हुई। 1920 ई० में बिहार और उड़ीसा में 'कामयती कानून' पास हुआ पर इसका कोई परिणाम नहीं निकला। औपनिवेशिक काल में समस्या ज्यों कि त्यों रह गई।

समाज में खेतिहर मजदूर भी थे जो अपने मालिक के खेतों में काम करते थे। इनकी संख्या में लगातार वृद्धि हो रही थी। सन् 1888 में इनकी संख्या $7\frac{1}{2}$ मिलियन थी, 1921 ई० में $21\frac{1}{2}$ मिलियन, 1931 ई० में 33 मिलियन थी। 1931 ई० के बाद इनकी संख्या में और अधिक वृद्धि हुई।

कृषक वर्ग

वारेन हेस्टिंग्स के राजस्व प्रबंध से विभिन्न कोटि के किसान प्रभावित हुए। इस काल में तीन तरह के किसान थे — खुदकाश्त (Khudkasht), पैकाश्त (Paikasht) और खलार (Khalar).

कृषक वर्ग

खुदकाश्त खुद अपनी जमीन पर काम करते थे तथा जमींदार को लगान देते थे। पैकाश्त के किसान भी दूर गाँव की जमीन को भाड़े पर लेकर काम करते थे। कुछ किसान ठेके पर (स्वलार) जमीन लेकर काम करते थे।

कुछ गरीब किसान थे जिनके पास थोड़ी बहुत अपनी जमीन थी, उनकी हालत मजदूरों की हालत से कुछ खास अच्छी नहीं थी। कुछ कृषक साझे के सिद्धान्त पर काम करते थे। इसमें फसल का 40% से 60% या कम से कम 40% तक जमीन के मालिक को मिलता था। जमीन का मालिक ही बीज, पशु, औजार और ऋण का प्रबन्ध करता था। इन्हें शिकमी काश्तकार भी कहा जाता था। ये एक ही जैसी शर्तों पर साल-दर-साल अपनी जीविका चलाते थे।

इसी तरह कृषक मजदूर भी मालिक के बीज, पशु और औजार का इस्तेमाल करते थे। समय-समय पर अपनी आवश्यक जरूरतों के लिए अग्रिम राशि भी लेते थे। अंत में उन्हें फसल से बची हुई राशि मिलती थी या फसल का कोई निश्चित भाग। इन्हें यदा-कदा अनाज के साथ नकद द्रव्य भी मिलता था। लेकिन इनकी अवस्था भी दयनीय थी।

जमींदार वर्ग

ब्रिटिश शासन काल की जमींदारी प्रथा में दो तरह की जमींदार थे - हुजूरी और मजकूरी। हुजूरी जमींदार सीधे सरकार को लगान देते थे। मजकूरी मूल जमींदार के अधीन थे और वे जमींदार को लगान देते थे। कुछ भूमि धार्मिक व सांस्कृतिक उद्देश्यों के लिए मुफ्त दी गई थी उसपर कर नहीं लगता था। ऐसी भूमि को ला खिराज (Lakhiraj) कहा जाता था।

ब्रिटिश काल में जमींदारी प्रथा का मुख्य उद्देश्य मुनाफा कमाना था, सेवा का कोई मूल्य नहीं रह गया था।

वारेन हेस्टिंग्स की भू राजस्व नीति ने जमींदारी को जमीन का मालिक बना दिया। उन्हें लगान वसूली का काम दिया गया। वे लगान का 10 वां भाग राजकोष में जमा करते और 1 भाग स्वयं रखते थे। समय पर लगान जमा न करने पर उनकी जमींदारी ले ली जाती थी। इस व्यवस्था के तहत बंगाल के बड़े २ जमींदार विनष्ट हो गए। बंगाल की जमीन का 50% भाग पुराने जमींदारों के हाथ से निकल गया। ये पुराने जमींदार अपने काश्तकारों के प्रति हमदर्द थे।

अब नए जमींदार वर्ग का उदय हो चुका था। जमींदारों को स्थायी प्रबन्ध के तहत काफी अधिकार मिले। भारतीय

जमींदार वर्ग

किसानों की गरीबी और ऋणग्रस्तता के कारण किसान की जमीन बनिया, महाजन या जमींदार के हाथ में जाने लगी। गैर काश्तकार जमींदारों का नया वर्ग जन्म ले लिया। रैयतवाड़ी इलाकों में धीरे २ जमींदार और गैर काश्तकार संबंधों का विस्तार हुआ। अब वे काश्तकारों से खेती करवाने लगे। नए जमींदार वर्ग में साहूकार व व्यापारी थे। वे भूमिक्रय में अपनी पूंजी का विनिवेश करने लगे।

इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि कल-कारखानों या उद्योगों में पूंजी के विनिवेश न होने से औद्योगिक दृष्टि से भारत पिछड़ गया। किसानों के बीच वर्ग विशिष्टीकरण की प्रक्रिया तीव्रतर होती गई। खेतीहर मालिकों और काश्तकारों की संख्या ~~घटी~~ घटती गई और गैरकाश्तकार जमींदारों की संख्या बढ़ती गई।

जमींदारों की संख्या में वृद्धि का एक कारण सामंतीकरण था। प्रथम: बड़े जमींदार अपनी जागीर का कुछ भाग दूसरे व्यक्ति के हाथ में हस्तांतरित कर देते थे, कुछ तो रेहन (lease) पर भी अपनी जमीन दूसरे काश्तकारों को देने लगे। कुछ जमींदार तो अपनी जमीन ऊँचे दामों में बेचने लगे।

मध्यस्थों का विकास तेजी से हुआ। ~~अब~~ प्रत्येक भू-स्वामी अधिकाधिक लगान वसूलने

जमींदार वर्ग

लगा। बंगाल में इनकी संख्या 50 लाख तक हो गई। पंजाब में 60 लाख से 1 करोड़ हो गई। 1891 से 1921 ई० के बीच इनकी संख्या में 46% से 50% तक वृद्धि हो गई।

लगान वसूली के कारण सरकार, मध्यस्थ एवं रैयत के बीच सम्बन्ध बिगड़ने लगे। मध्यस्थ सदैव कठोरता से पेश आते थे।

1776 ई० में वारेन हेस्टिंग्स ने आमीनी आयोग (Amini Commission) नियुक्त किया। इसकी सिफारिश पर 1777 ई० में पुरानी जमींदारी प्रथा शुरू की गई। 1777 से 1785 तक प्रतिवर्ष जमींदारों से एक निश्चित लगान की रकम तय की गई। कार्नवालिस के आने के बाद परिस्थिति में परिवर्तन आया।

कार्नवालिस के स्थायी भूमि प्रबन्ध ने बंगाल में जमींदार वर्ग को जन्म दिया। जो जमींदार यह महसूस करते कि वे समय पर एक निश्चित लगान सरकार को नहीं दे पायेंगे वे अपनी जागीर को विभक्त कर बेचने लगे। ऐसी जागीर खरीदने वाले पटनी (Patni) कहलाते थे। ये पटनी भी अपनी जागीर का छोटा भाग बेचने लगे। इनके क्रेताओं को दर-पटनीदार कहा जाता था। ये भी अपनी जागीर के छोटे भाग को बेचते थे।

इन जमींदारों में कई तो अनुपस्थित जमींदार थे, जो किसानों को नहीं जानते थे।

मद्रास और बम्बई में रैयतवाड़ी भूमि प्रबन्ध के कारण नया मध्य वर्ग पैदा हुआ

जमींदार वर्ग

जो मारवाड़ी वर्ग था। यह किसानों को सूद पर जमीन-बाड़ी जमीन पर कर्ज देता था। मद्रास में यह काम ब्राह्मण सेठ साहूकार करते थे।

इस प्रकार एक ग्रामीण पूँजीपति वर्ग का जन्म हुआ, जिसमें जमींदार और सेठ-साहूकार थे, जो किसानों की सेवा से लाभ उठाते थे। लेकिन, समाज में जमींदार वर्ग का उदय राष्ट्रीय आंदोलन में बाधक सिद्ध हुआ। कुछ ही जमींदार देशभक्त थे। अधिकांश ब्रिटिश राज के दृढ़ स्तंभ थे, जो अंग्रेजों की तरह राष्ट्रीय आंदोलन के दमन का प्रयास करते थे। वे जानते थे कि उनका अस्तित्व ब्रिटिश राज के अस्तित्व से जुड़ा हुआ है।

R. Kumari
Deptt of Hist
DSPMU, Ranchi